बाबा नागार्जुन के काव्य में व्यंग्य

रूबी त्रिपाठी
सहायक प्राध्यापक (अतिथि संकाय)
हिन्दी विभाग,
आर्य कन्या डिग्री कालेज (संघटक महाविद्यालय, इलाहाबाद केन्द्रीय विश्वविद्यालय) इलाहाबाद

व्यंग्य एक ऐसी साहित्यिक अभिव्यक्ति है जिसमें व्यक्ति तथा समाज की कमजोरियों, दुर्बलताओं, कथनी एवं करनी के अन्तरों की समीक्षा अथवा निन्दा भाषा की टेढ़ी भंगिमा देकर की जाती है। वह पूर्णतः अगम्भीर होते हुए भी, गंम्भीर हो सकती है, निर्दय एवं कठोर लगते हुए भी दयालु हो सकती है, प्रहारात्मक होते हुए तटस्थ लग सकती है, मखौल लगती हुई बौद्धिक हो सकती है। वह अतिशयोक्ति एवं अतिरंजना का आभास देने के बावजूद पूर्णतः सत्य हो सकती है। अतः व्यंग्य में आक्रमण की उपस्थिति अनिवार्य है।

आधुनिक हिन्दी कविता में व्यंग्य का चित्रण भारतेन्दु युग से मिलने लगता है। छायावाद युग में व्यंग्य का चरमोत्कर्ष हमें निराला के कुकुरमुत्ता में मिलता है। आधुनिक प्रगतिशील हिन्दी कविता के अन्य कवियों में भी व्यंग्य के प्रखर रूप मिलते हैं। किन्तु नागार्जुन जी के काव्य में व्यंग्य का अधिक प्राचुर्य है। नागार्जुन आधुनिक हिन्दी कविता में छायावाद के परवर्ती युग उत्तर छायावादयुग में आते हैं। आधुनिक प्रगतिशील हिन्दी कविता में नागार्जुन व्यंग्यकार कवि के रूप में ख्यात एवं प्रख्यात हैं।

रचनाकार की सामाजिक चेतना जितनी प्रखर होगी, उसका व्यंग्य भी उतना ही तीक्ष्ण एवं प्रभावशाली होगा। व्यंग्य नागार्जुन के काव्य का सबसे बड़ा सम्बल एवं प्रखर गुण है। इनकी बोल चाल की भाषा में भी व्यंग्य ही छिपा रहता है। व्यंग्य कविताओं में कवि को अधिक सफलता मिली है। इस दृष्टि में नागार्जुन अपने समकालीन एवं सनातनधर्मा कवियों में सर्वश्रेष्ठ एवं अन्यतम है। यही कारण है कि आधुनिक हिन्दी कविता में नागार्जुन का व्यंग्य अधिक प्रभावपूर्ण सिद्ध हुआ है। नागार्जुन की व्यंग्य–युक्त कविताएं निम्नांकित दिशाओं की ओर उन्मुख हुई है।

नागार्जुन की कविताओं में हास्य व्यंग्य की प्रधानता है। हास्य व्यंग्य युक्त कविताओं की भाषा मधुर होती है। नागार्जुन ने हास्य–व्यंग्य का बड़ा ही मनोरम वर्णन किया है। 'जयति नखरंजनी' शीर्षक कविता में कवि ने हास्य व्यंग्य का बड़ा ही सटीक एवं यथार्थ चित्रण किया है। इस कविता में बाबा ने नई दिल्ली की तीन स्त्रियों का उल्लेख किया है, जो हाथ में काले निशान लगने के भय से बगैर वोट दिये वापस लौट जाती हैं, तभी तो कवि ने कहा है –

''सामने आकर
रुक गई चमचमाती कार
बाहर निकली वासकसज्जा स्त्रियां
चमक उठी गुलाबी धूप में तन भी चम्पई कान्ति
तिकोने नाखूनों वाली उंगलियां
सूर्ख नेलपालिश
कीमती रिस्टवाच
अंगूठियों के नाग
कानों के मणिपुष्प
किंचित कपड़े हुए सघन नील कुन्तल
सब कुछ चमक उठा, महक उठा वायुमण्डल
तरल त्वरित गति थी
ललित थी भंगिमा
करीब के पार्टी–कैम्प तक जाकर पूछ ली अपनी क्रम संख्या
तत्पश्चात् आगे बढ़ीं पोलिंग बूथ की ओर
आ रहा था डाल कर वोट एक अधेड़
उंगली की जड़ में चमक रहा था काला ताजा निशान
ठमक गए सहसा बेचारियों के पैर;
हाथ इतने सुन्दर हाथ हो जायेंगे दाजी!
भड़क उठा परिमार्जित रुचि–बोध
फिः! कौन लगवाए काला निशान!
कौन ले वैलेट पेपर, मतदान कौन करें!
क्षणभर ठिठक कर
नई दिल्ली की तीनों परियां
मुड़ गई सहसा
स्टार्ट हुई कार, लोग लगे हंसने।'[1]

नागार्जुन की यह कविता हास्य प्रधान है। नई दिल्ली की तीनों वासकसज्जा स्त्रियां श्रृंगारिक प्रसाधनों से सज–धज कर मतदान करने जाती हैं किन्तु जब उन्हें ज्ञात होता है कि वोट के अवसर पर हाथ में काले निशान लगेंगे तो वह हाथ काले होने के भय से बिना मतदान किए ही कार पर

चढ़ती हैं और वापस घर की ओर लौट जाती हैं। इस दृश्य को देखकर बूथ पर जितने भी लोग उपस्थित थे, सभी हंसने लगते हैं। नागार्जुन ने हास्य–व्यंग्य की तो कविताएं ही है किन्तु कटु व्यंग्य पूर्ण कविताएं भी इनकी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। कटुव्यंग्य की सबसे बड़ी जीत उसका सत्य है। निराला के बाद हिन्दी कविता में इस तरह के कटुव्यंग्य का यथार्थ एवं मार्मिक चित्रण हमें नागार्जुन की कविताओं में मिलता है। 'तुम रह जाते दस साल और' शीर्षक कविता में नागार्जुन ने जवाहरलाल नेहरू की मृत्यु पर कटु व्यंग्य किया है। इस कविता में कवि ने नेहरू की राजनीति पर दृष्टिपात किया है –

'झुकती स्वराज्य की डाल और
तुम रह जाते दस साल और
गलती समता की दाल और
तुम रह जाते दस साल और।'[2]

नागार्जुन के व्यंग्य प्रहार से कोई नहीं बच सका है। नागार्जुन का व्यंग्य अत्यन्त कठोर, तीव्र एवं लोगों को मुंह चिढ़ाने वाला होता है। नागार्जुन के करुण व्यंग्य का भी यथार्थ चित्रण किया है। नागार्जुन यथार्थ वादी कवि हैं। यथार्थवादी कवि की दृष्टि अत्यन्त सूक्ष्म एवं पैनी होती है। यथार्थवादी कवि से यथार्थ छिपता नहीं है। अतः नागार्जुन भी इससे अछूते नहीं रहे हैं। 'घिन तो नहीं आती है' शीर्षक कविता में नागार्जुन ने पसीने से लथपथ और कत्थई दांतों की मोटी मुस्कान, बेतरतीब मूंछों वाली थिरकने वाले कुली– मजदूरों के ट्राम में किसी सफेदपोश अभिजात संस्कारों में पले व्यक्ति के बराबर बैठ जाने पर 'जी तो नहीं कुढ़ता है? घिन तो नहीं आती है?' कहकर समूची करुणा को कवि ने व्यंग्य के रूप में प्रदर्शित किया है –

कुली मजदूर हैं
बोझ ढोते हैं खींचते हैं ठेला
आकर ट्राम के अन्दर पिछले डब्बे में
बैठ गये हैं इधर–उधर तुमसे सटकर
आपस की उनकी बातकही
सच–सच बतलाओ
जी तो नहीं कुढ़ता है?
घिन तो नहीं आती है?[3]

प्रस्तुत कविता में नागार्जुन ने बोझ ढोते हुए कुली एवं मजदूरों का बड़ा ही यथार्थ एवं मार्मिक वर्णन किया है। नागार्जुन जनकवि हैं। यही कारण है कि वे जन–सामान्य के दुःख से दुःखित एवं पीड़ित होते हैं।

नागार्जुन का व्यंग्य राजनीति क्षेत्र में अधिक विकसित रहा है। प्रत्यक्ष राजनीति के वामपंथी आन्दोलनों से सम्बद्ध नागार्जुन जन–साधारण से पूरी तरह संपृक्त है और सरल एवं सहज भाषा में राजनीति पर व्यंग्य लिखते हैं। नागार्जुन का अधिकांश व्यंग्य वर्तमान सामाजिक व्यवस्था, शासन तथा सभ्यता को लक्ष्य कर लिखे गये हैं। 'इस गुलबारे की छाया में' शीर्षक कविता में कवि ने आधुनिक शासन व्यवस्था और देश के अधुनिक नेताओं को चुभता हुआ व्यंग्य किया है। नागार्जुन देश के खद्दरधारी नेताओं के आचार एवं व्यवहार से अच्छी तरह अवगत हैं। 'इस गुलबारे की छाया में' नागार्जुन ने वर्तमान कांग्रेस तथा गांधी जी की रामराज्य की कल्पना पर व्यंग्य किया है। महात्मा गांधी की रामराज्य की कल्पना सचमुच महान थी किन्तु उनके पश्चात् इस महती कल्पना को पूर्णरूप से कार्यान्वित नहीं किया गयां यही कारण है कि नागार्जुन का आक्रोश तीव्र हो उठा, तभी तो उन्होंने कहा है –

'लाज–शरम न रह गई बाकी गांधी जी के चेलों में
फूल नही, लाठियां बरसतीं, रामराज्य की जेलों में
भैया, लन्दन ही पसन्द है आजादी की सीता को
नेहरू अब उमर गुजारेंगे अंग्रेजी खेमें में
लाज–शरम रह गई न बाकी गांधी जी के चेलों में।[4]

इसी सन्दर्भ में कवि ने आधुनिक भारत की नवीन योजनाओं पर भी प्रहार किया है। भारत सरकार द्वारा विदेशी नेताओं के स्वागतार्थ जो अपव्यय किया जाता है उससे नागार्जुन दुःखी हैं। एक ओर विदेशियों के स्वागत में करोड़ों रुपये खर्च किए जा रहे हैं और दूसरी ओर गरीबों को दोनों समय की रोटी भी नसीब नहीं होती है। नागार्जुन देश की इस विषम परिस्थिति में दयनीय अवस्था को देखकर झुब्ध हैं।

नागार्जुन ने भारत की आर्थिक स्थिति पर भी गम्भीर रूप से सोचा और लिखा है। वे देश की आर्थिक विपन्नता एवं समस्या को देखकर दुखी हैं। आर्थिक विपन्नता किसी भी देश के लिए निन्दनीय है। जबतक देश में आर्थिक समस्या का समाधान एवं निदान नहीं होगा, तब तक समाज एवं देश का विकास सम्भव नहीं है। 'गेहूं दो, चावल दो' शीर्षक कविता में नागार्जुन ने देश की आर्थिक स्थिति का यथार्थ वर्णन किया है। इस कविता के माध्यम से नागार्जुन ने यह व्यक्त किया है कि भारत सरकार कर्ज के रूप में विदेशी सरकार से गेहूं और चावल मांगती है। सचमुच यह भारत

सरकार तथा भारत में निवास करनेवाले पीड़ित एवं शोषित भारतीय जनता के लिए कितना निन्दनीय विषय है। इसी तरह 'खाली नहीं, और खाली' शीर्षक कविता में भी नागार्जुन ने देश की आर्थिक स्थिति एवं दरिद्रता का यथार्थ वर्णन किया है –

'मकान खाली नहीं है
दुकान खाली नहीं है
स्कूल नहीं खाली, खाली नहीं कालेज
खाली नहीं टेबुल, खाली नहीं मेज
खाली अस्पताल नहीं
खाली है हाल नहीं
खाली नहीं चेयर, खाली नहीं सीट
खाली नहीं फुटपाथ, खाली नहीं स्ट्रीट
खाली नहीं ट्राम, खाली नहीं ब्रेन
खाली नहीं है हाथ, खाली नहीं पेट
खाली है थाली, खाली है प्लेट।[5]

नागार्जुन की सहानुभूति का पात्र जन–सामान्य है। इस कविता में कवि ने जन–सामान्य की विषम परिस्थितियों को उनकी समस्त विकरालता के साथ प्रस्तुत किया है। वास्तव में देखा जाए तो नागार्जुन की यह कविता आज की वर्तमान सामाजिक व्यवस्था एवं स्थिति का जीता–जागता उदाहरण है। एक ओर हम देखते हैं कि गरीबों को दोनों समय भोजन नहीं मिलते हैं और दूसरी ओर हम देखते हैं कि धनियों के कुत्ते भी दूध–घी की नदी में स्नान करते हैं। जन–सामान्य भूख एवं पीड़ा से ग्रस्त है। किन्तु उसकी दशा सुधारने का कोई प्रयत्न नहीं किया जा रहा है।

नागार्जुन के काव्य में सामाजिक व्यंग्य की बहुलता एवं प्राचुर्य है। नागार्जुन समाज से कभी अलग नहीं होते हैं। समाज के साथ कवि का अभिन्न संबंध हैं। इसका स्पष्ट उल्लेख 'सौन्दर्य प्रतियोगिता' शीर्षक में मिलता है। इस कविता में नागार्जुन ने आधुनिक फैशन परस्त सभ्यता एवं साधनों पर व्यंग्य किया है। यहां इन्होंने दो मछलियों के रूपक के आधार पर आज के कृत्रिम प्रदर्शन पर व्यंग्य किया है। सामाजिक प्रदर्शन की दृष्टि से यह कविता महत्वपूर्ण है –

'गंगा की मछली.....
जमुना की मछली .....
सहेली थी दोनों,
हिल–मिल कर रहती थीं

एक बार हुआ यूं कि

सुलग उठी स्पर्धा की आग दोनों के अन्दर

मैं हूं सुन्दर तो मैं हूं सुन्दर!'[6]

नागार्जुन का व्यंग्य अपने समकालीन कवियों में प्रधान ही नहीं वरन् भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवं निराला के व्यंग्य से भी अधिक प्रखर एवं प्रभावशाली है। व्यंग्य काव्य की दृष्टि से नागार्जुन संत कवि कबीरदास की परम्परा को अग्रेसर एवं उजागर करते हैं। व्यंग्य काव्य की दृष्टि से नागार्जुन आधुनिक हिन्दी कविता के कबीर हैं।

व्यंग्य में ही नागार्जुन का असली रूप प्रकट होता है। सामाजिक व्यंग्य की जो परम्परा भारतेन्दु युग के बाद प्रायः अवरुद्ध हो गयी थी कविता के प्रगतिशील यथार्थवादी युग में आकर नागार्जुन ने उसे फिर से जीवित किया जो आधुनिक हिन्दी कविता के लिए लाभप्रद हुई।

संदर्भ :

1. नागार्जुन : चुनी हुई रचनाएं, पृष्ठ 122–123
2. वहीं पृष्ठ 163
3. नागार्जुन : चुनी हुई रचनाएं, पृष्ठ 133
4. नागार्जुन : हम गुब्बारे की छाया में, पृष्ठ 62
5. नागार्जुन : समरंगे पंखों वाली, पृष्ठ 41
6. नागार्जुन : चुनी हुई रचनाएं, पृष्ठ 140

****